॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु ! वास्तव में हम आराधना के तो योग्य हैं ही नहीं क्योंकि जन्म-जन्मान्तरों के सँस्कार मुझे सदैव बाध्य करते रहते हैं। उनसे भी मैं पार होना चाहता हूँ। हे प्रभु ! वास्तव में वह आपकी महिमा का गुण गान इतना नहीं गाने देते जितना गाना चाहिए। प्रभु ! वास्तव में गाता हूँ, सूक्ष्म गाता हूँ। वाणी का प्रसार भी होता है परन्तु वह जो नाना जन्म-जन्मान्तरों के नाना अंकुर मल इत्यादि से अकृत उनसे मैं आपकी महिमा द्वारा दूर होना चाहता हूँ। यह नाना प्रकार के सँस्कार बाध्य बन करके आपकी शरण में नहीं आने देते।

हे देव ! हम यह चाहते हैं कि न तो हम सँसार में नास्तिक होना चाहते हैं और न आस्तिक ही बनना चाहते हैं। हम तो यह चाहते हैं कि हमारे जो नास्तिक और आस्तिक के मध्य में एक सीमा है वह भी हमसे नष्ट हो जाये, वह भी दूर चली जायें। हम वास्तव में आस्तिक भी नहीं होना चाहते, नास्तिक भी नहीं बनना चाहते, दुराचार और सदाचार भी नहीं चाहते। प्रभु चाहते क्या हैं कि दोनों के मध्य में जो एक सीमा है वह भी नष्ट हो जाये। क्योंकि आप इतने उदार हैं कि आपके द्वारा न तो मान है न अपमान है। न सदाचार आपको छू सकता है और न दुराचार आपको छू सकता है। प्रभु ! आप तो सदैव एक रस रहते हो। ऐसे ही प्रभु ! हम चाहते हैं कि हमारे मध्य से भी यह जो नाना प्रकार के हमें नष्ट करने के लिए क्षेत्र बने हुए हैं उनको हम नहीं चाहते, ऐसी हमारी कामना है। इसीलिए प्रभु ! मैं आपको बारम्बार नमस्कार कर रहा हूँ।

(पुष्प संख्या 13 प्रवचन दिनाँक 1 नवम्बर 1969)

–पूज्यपाद गुरुदेव

अंक : 498 समग्र अंक : 573
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	ब्रह्मयाग	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-18
4.	त्रिविद्या, त्रिवेणी और चक्र	पूज्यपाद-गुरुदेव	19-36
5.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना आदि		37-40

वैदिक अनुसन्धान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते के साथ-साथ निम्न किसी एक पते पर भी डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
   ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-26498737
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294
3. श्री जितेन्द्र चौधरी, प्रचार मन्त्री
   ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मोबाइल : 9811707343

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : www.contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

ब्रह्मयाग

जीते रहो,

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना विचारवेत्ता हुए हैं और वह परमपिता परमात्मा की सृष्टि के ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं परन्तु उसके पश्चात् भी मानव अपने में शान्त हो गया है। इस संसार को अपने में समा लेता है और उसके पश्चात् भी वह मौन हो जाता है।

आत्मा के गृह

आज का हमारा वेद-मन्त्रः क्या कह रहा है—वेद-मन्त्र कह रहा है आत्माम् भवि वर्णस्सुतम देवाः। वेद का मन्त्र आत्मा के सम्बन्ध में विवेचना कर रहा है—गृहाम् ब्रह्मा गृही अस्सुतम गृहीताम्। वेद का वाक् प्रश्न कर रहा है क्या आत्मा के कितने गृह होते हैं? तो वेद का मन्त्र उसका उत्तर देता है—गृहयाम ब्रह्मणे देवत्वाम् त्रि वर्सुतप प्रहा। तो वेद का मन्त्र कहता है कि तीन प्रकार के इसके शरीर और इसके गृह माने गये हैं। जब महर्षि जालवी मुनि महाराज से यह प्रश्न किया गया क्या महाराज आत्मा का लोक क्या है? लोक कहते हैं गृह को। तो महर्षि जालवी ने कहा कि

आत्मा का जो लोक है वह पँच-महाभूत माना गया है मानो पँच-महाभूतम ब्रह्मे वर्णनं आत्माः। आत्मा का जो लोक है यह पँच-महाभूत हैं और पँच-महाभूतों में बेटा ! सबसे प्रथम अग्नि, वायु और अग्रतम तरलत्व, तेजोमयी, गुरुत्व और अन्तरिक्षाम् भूतम्। तो मेरे प्यारे ! देखो यह पँच-महाभूतों का लोक है और इस पँच-महाभूतों के लोक में रहने वाला यह आत्मा विद्यमान है। तो इसलिए वेदाचार्यों ने, वेद के विचारकों ने यह कहा है कि हम पँच-महाभूतों के लोक को विचारने लगें तो उसके ऊपर अन्वेषण करना हमारा कर्त्तव्य है। तो यहाँ परम्परागतों से बेटा ! अन्वेषण होता रहा है और विचारक इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं। क्योंकि जिस गृह में आत्मा वास करता है उस गृह के अव्ययों को जानना बहुत अनिवार्य है। क्योंकि जब तक उन्हें हम नहीं जान पाते तो विवेक की उपलब्धि नहीं होती अथवा विवेक नहीं होता और जब तक विवेक नहीं होता तो ज्ञानाम् भूतम् देखो ज्ञान भी नहीं होता और जब ज्ञान नहीं होता तो विवेकाम् भूतम् देखो विवेक भी नहीं होता, परन्तु दोनों शब्द एक दूसरे के पूरक कहलाते हैं। और जब ज्ञान भी नहीं होगा तो हम यौगिकवाद में नहीं पहुँच सकेंगे और यौगिकवाद नहीं होगा तो मेरे प्यारे ! देखो हमारा जीवन भी अधूरेपन में निहित रहेगा। तो इसीलिए देखो जो भी मानो इस संसार में अपनी आत्मा का उत्थान करना चाहता है जन्मम् ब्रह्मे वर्णनं वृते क्योंकि **आत्मा का जन्म नहीं होता। आत्मा सदैव अखण्ड रहने वाला है।** तो आत्मा, इसलिए आत्मा के ऊपर चिन्तन करना मानव का बहुत ही अत्यन्त कर्त्तव्य कहलाता है कि हमारा जो जीवन है वह आत्मा भूतम् ब्रह्मा देखो **आत्मा उसका परमपिता परमात्मा से जिसका समन्वय रहता है।**

आओ मेरे प्यारे ! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं, विचार केवल यह कि जालवी ने यह कहा कि आत्मा का जो लोक है वह पँच-महाभूत माना गया है। इसी में मानो देखो, इस

मानव शरीर में गुरुत्व, तरलत्व, तेजोमयी और मानो देखो अवकाश और मुनिवरो ! देखो गति यह अपने में रत्त रहने वाला एक अवृत कहलाया जाता है। तो विचार आता है, वेद का मन्त्र कहता है क्या यह पँच-महाभूतों का यह मानो पँच-महाभूतों का लोक है इसमें आत्मा विद्यमान रहती है। तो आत्मा मानो देखो कहीं हृदय है, कहीं बुद्धि है और कहीं चित्त और मनस्तत्त्व, अहंकार कहलाये जाते हैं। तो बेटा ! देखो यह नाना प्रकार के अव्ययों से मानो देखो इसकी निर्माणीत्ता होती है। तो विचारवेत्ता कहते हैं कि इसको जानना हमारे लिए बहुत अनिवार्य माना गया है।

आओ मेरे प्यारे ! देखो **आत्मा का लोक सबसे प्रथम स्थूल माना गया है** जैसा मुनिवरो ! देखो महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का प्रसंग भी आता है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यह कहा अमृतम् ब्रह्मणे वृतम देवाः कि हमारे दो प्रकार के जगत माने गये हैं। एक बाह्य जगत है, एक आन्तरिक जगत माना गया है। तो बाह्य जगत में यह संसार कहलाता है परन्तु आन्तरिक जगत हमारा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार मानो ये आन्तरिक जगत माना गया है। इसका बाह्य जगत इन्द्रियों के द्वारा मानो निर्मित होता रहता है। तो विचारवेत्ता कहते हैं एक मानव का शरीर यह है जो स्थूल रूप में कहलाता है और **द्वितीय जो हमारा शरीर है वह अमृतम देखो आत्मा का जो लोक है, आत्मा का शरीर सूक्ष्म शरीर कहलाता है।** तो सूक्ष्म उसे कहा जाता है जहाँ देखो दस प्राण हैं, दस इन्द्रियाँ हैं और मुनिवरो ! देखो अमृतम स्थूल इन्द्रियाँ समाप्त हो करके पँच रह जाते हैं। देखो वह प्रकृति की अव्ययों की मात्रा बन जाती हैं और मन और बुद्धि यह हो करके सत्रह तत्त्वों का रह जाता है। तो विचारवेत्ताओं ने कहा कि आत्मा का लोक यह हमारा सूक्ष्म शरीर है। परन्तु देखो एक समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से जब यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु यह तीसरा मण्डल क्या है? उन्होंने कहा **तीसरा मानो देखो कारण**

शरीर कहलाता है जहाँ ज्ञान और प्रयत्न इसका स्वाभाविक गुण माना गया है। दोनों में मानो देखो गुणाधानम् ब्रह्मे जब तक देखो इन अव्ययों को हम अपने से दूरी नहीं कर सकते ज्ञान और प्रयत्न को भी नहीं जान सकेंगे तो हम आत्मा की आभा को नहीं जान सकते।

विचारवेत्ताओं ने कहा कि आत्मा को जानना, आत्मा के लोकों को जानना बहुत अनिवार्य है क्योंकि **संसार में जन्म किसी वस्तु का नहीं होता है।** जन्मम् ब्रह्मा लोकाम् वाचप प्रव्हा **परन्तु मिलन होता है,** उस मिलन के लिए मानव अपने में उल्लास को प्राप्त होता रहा है। परम्परागतों से ही हम मानो देखो सूक्ष्म जगत में जाते हैं तो आत्मा का मानो देखो आत्मा का निधन नहीं होता और देखो जितने भी हमारे अव्यय शरीर में विद्यमान हैं जो तेजोमयी हैं, तरलत्व हैं और देखो गुरुत्व कहलाया जाता है तो यह सर्वत्र मानो देखो इसका भी विनाश नहीं होता। गति ज्यों कि त्यों रहती है, अवकाश ज्यों का त्यों रहता है। तो मुनिवरो ! देखो इसलिए आत्माम् भूतम् ब्रह्मा लोकाम् व्रते ऋषियों ने यह कहा, आचार्यों ने इसका वर्णन करते हुए कहा कि हमारी आत्मा का जो लोक है यह हमारा शरीर है, आत्मा के लोक मानो देखो परमपिता परमात्मा की प्रतिभा कहलाई जाती है। तो विचारकों ने कहा कि आत्मा को जानना और देखो हमारे लिए अवृतियों को जानना बहुत अनिवार्य है।

यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने आचार्य याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से यह कहा कि प्रभु आत्मा का लोक क्या है? तो उस समय मुनिवरो ! देखो उन्होंने एक रूपक बनाया और रूपक बना करके उन्होंने एक ब्रह्मचारी को उपस्थित किया और ब्रह्मचारी से यज्ञदत्त ने कहा अमृतम् प्रश्न करो। तो उन्होंने मुनिवरो ! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से यह प्रश्न किया क्या महाराज अमृतम् ब्रह्मे लोकाम् अमृतम् ब्रव्हे क्रतम् देवाः कि हम अपने में इस शरीरायाम देखो यजमान अपने

में यागानाम् ब्रव्हे याजपप्रव्हे ये याग करना चाहता है तो याग कैसे करे? तो उन्होंने कहा कि **याग का वह मानव देखो इस संसार में अधिकारी होता है जो यागों के अव्ययों को जान लेता है अथवा जो अपनी आभा को जान लेता है।** मेरे प्यारे ! देखो यही वाक् महर्षि पिप्पलाद ने अपनी पत्नी से कहा था क्या अमृतम् ब्रह्मे लोकाम् वाचसतम्। मेरे प्यारे ! उन्होंने कहा देवी तुम रुदन न करो यह संसार तो मानो देखो कोई अव्यय समाप्त नहीं होता। तो मुनिवरो ! देखो इस प्रकार उन्होंने अपनी वार्ता प्रकट की।

मेरे प्यारे ! देखो आज मैं तुम्हें पुनः से यह वाक् प्रगट करने चला हूँ कि हमारे यहाँ प्रत्येक मानव को अपनी मानवीयता को जानना है और मानवीयता को जानने वाला ही मानवत्व को प्राप्त होता रहा है। तो आओ मुनिवरो ! देखो आज मैं तुम्हें याज्ञाम् भूतम् ब्रह्मे देखो राजा जनक की सभा में ले जाना चाहता हूँ। राजा जनक की सभा में बेटा ! एक ब्रह्मवेत्ताओं का समाज एकत्रित हुआ। हमारे यहाँ नाना प्रकार के यागों का वर्णन प्रायः वैदिक साहित्य में होता रहा है। उन्होंने बेटा ! देखो जहाँ यह देवयाग है वहीं ब्रह्मयाग का भी उन्होंने वर्णन किया है।

राजा जनक की सभा में ब्रह्म चिन्तन

राजा जनक के यहाँ ब्रह्मयाग होता रहता था। जब वह ब्रह्मयाग होता रहता तो बेटा ! उन्होंने एक समय, राजा जनक ने अपने एक सौ एक गऊओं के मानो देखो सिंगों पर सोना मथ करके उन्होंने कहा कि जो ब्रह्मवेत्ता सबसे महान् हो यह इन गऊओं को अपने आश्रम में ले जा सकता है। तो मुनिवरो ! देखो वहाँ सब शान्त थे। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने ब्रह्मचारियों के सहित उस सभा में पधारे और पधार करके अमृतम् उन्होंने कहा देखो वर्णनम् ब्रह्मे गऊंमा आश्रम देह क्या गऊओं को अपने

आश्रम में ले चलो। तो मुनिवरो ! ब्रह्मचारियों ने देखो गऊओं को अपने आश्रम में ले गये। तो वहाँ एक ब्रह्मवेत्ताओं में एक क्रान्ति उत्पन्न हुई कि क्या यह याज्ञवल्क्य अपने में ब्रह्मवेत्ता है यह मेरे विचार में नहीं आ रहा है। परन्तु देखो सब ब्रह्मवेत्ता अपने में शान्त थे। प्रश्न कोई नहीं कर रहा था। तो मेरे प्यारे ! देखो इतने में महात्मा अश्वल ने कहा क्या हे याज्ञवल्क्य क्या तुम सबसे ब्रह्मवेत्ता हो—यह कहा कि गऊओं को वो ले जा सकता है जो तुममें सबसे ब्रह्मवेत्ता हो? उन्होंने कहा मैं ब्रह्मवेत्ता तो नहीं हूँ परन्तु यदि तुम कोई बारी-बारी मेरे से प्रश्न करोगे तो उसका यथोचित मैं उत्तर दे सकूँगा। मेरे पुत्रों ! देखो वह शान्त हो गये। इतने में मुनिवरो ! देखो राजा जनक के पुरोहित अश्वाक केतु ने कहा कि महाराज क्या आप ब्रह्मवेत्ता हैं? उन्होंने कहा मैं ब्रह्मवेत्ता नहीं हूँ। मेरे से कोई प्रश्न करेगा मैं उसका उत्तर दे सकूँगा।

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और चाक्राणी गार्गी सम्वाद

मेरे प्यारे ! इतने में चाक्राणी गार्गी उपस्थित हुई और चाक्राणी गार्गी ने यह कहा कि हे ब्रह्मवेत्ताओं ! यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो मैं इस ब्रह्मवेत्ता से दो प्रश्न कर सकती हूँ। तो ब्रह्मवेत्ताओं ने कहा कि अवश्य कीजिए। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने वर्णन करते हुए कहा सम्भूति ब्रह्मणा लोकाम् वाचस्सुतम् देवाः। मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने कहा ब्रह्मे, हे प्रभु ! आप ब्रह्मवेत्ता हैं। उन्होंने कहा देवी मैं ब्रह्मवेत्ता तो नहीं हूँ परन्तु तुम मेरे से कोई प्रश्न करो तो मैं उसका उत्तर दे सकूँगा। अमृतम्, तो चाक्राणी गार्गी ने प्रश्न किया क्या महाराज मेरे एक भुज में मानो देखो कमान है और उस पर तरकश कसा, उसका क्या लक्ष्य होना चाहिए? तो मेरे प्यारे ! देखो जब वह उपस्थित हो करके याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा क्या तुम्हारे भुज में मानो देखो प्राण रूपी तरकश है और प्राण रूपी तरकश के ऊपर अमृतम् देखो मन रूपी तरकश कसा हुआ है। प्राण ब्रह्मे देखो कमानम ब्रहे यह अमृतम् देवा **देखो**

कमान वो प्राण है और देखो तरकश मन कहा जाता है। तो मन का जो लक्ष्य है वह ब्रह्म को पाना है तो इसलिए ब्रह्म को पान करने के लिए तुम्हारे देखो कमान रूपी अमृत पर मानो देखो तरकश कसा हुआ है देखो उसका लक्ष्य ब्रह्म कहलाता है। तो प्रत्येक मानव जो इस संसार में आया है उसका एक ही लक्ष्य रहा है क्या वह ब्रह्म को पाना चाहता है। नाना प्रकार के मानो संसार के सुखद और आनन्द में वह केवल ब्रह्म को ही पाना चाहता है। मेरे प्यारे ! देखो एक पति पत्नी है वह अपने गृह में इसलिए प्रवेश करते हैं कि हमें आनन्द की प्राप्ति हो जाए। हम मानो देखो उस आनन्द में प्रायः देखो हमारा लक्ष्य पूर्ण हो जाए। परन्तु देखो आचार्यो ने सब वार्ता प्रगट करते हुए अन्त में एक ही वाक् कहा कि देखो **आनन्द वहाँ प्राप्त होता है जहाँ परमपिता परमात्मा की अनुभूति होती है।** तो मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा देवी यह जो प्राण है, इस प्राण से मन को मानो एकत्रित करते हुए तुम अपने लक्ष्य पर जा सकते हो। मेरे पुत्रो ! देखो याज्ञवल्क्य ने जब यह उत्तर दिया तो वह शान्त हो गयी।

जगत कहाँ प्रतिष्ठित होता है?

शान्त हो जाने के पश्चात् उन्होंने कहा प्रभु मैं एक वाक् और जानना चाहती हूँ क्या यह जो दृष्टिपात आने वाला जगत है यह कहाँ प्रतिष्ठित होता है? उन्होंने कहा यह जो जगत है, जो हमें दृष्टिपात आ रहा है यह मानो चार प्रकार की सृष्टियों में निहित रहता है। सबसे प्रथम सृष्टि का नाम स्थावर है और द्वितीय का नाम अण्डज है और तृतीय का नाम जंगम है और चतुर्थ का नाम उद्भिज कहा जाता है। यह चार प्रकार की सृष्टियों में मानो यह संसार विभक्त हो रहा है। संसार अपनी आभाओं में रत्त हो रहा है। तो इस प्रकार ऋषि ने जब उत्तर दिया। उन्होंने कहा इसकी जो चारों प्रकार के जगत की जो प्रतिष्ठा है यह पृथ्वी में ओत-प्रोत हो जाती है।

पृथ्वी कहाँ रहती है?

उन्होंने कहा कि महाराज यह पृथ्वी कहाँ रहती है? उन्होंने कहा यह पृथ्वी जल में प्रतिष्ठित हो जाती है और जलम् ब्रह्मा व्रतम देवत्वाम् मानो देखो जल में यह प्रतिष्ठित होते अपने में प्रतिष्ठा को प्राप्त होता रहता है। तो मेरे प्यारे ! उन्होंने कहा यह गुरुत्व भी है यह पृथ्वी अपने में अपनेपन को ही प्राप्त होती रहती है। यह माता वसुन्धरा के नाम से इसका वर्णन किया गया है। वसुन्धरा कहते हैं जिसमें जो समाहित हो जाता है अथवा जो बसता रहता है उसी का नाम वसुन्धरा है। इसलिए प्रत्येक मानव प्राणी मात्र ही इसके ऊपर वशीभूत रहता है तो इस पृथ्वी का नाम वसुन्धरा कहा जाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो ऋषि कहता है सम्भवम् ब्रह्मा लोकाम् अस्वति देवाम् भूतम् उन्होंने कहा कि अमृते देवत्वाम अमृत को पान करना है तो अमृतता को प्राप्त होना होगा। उन्होंने कहा प्रभु यह भी मैंने जान लिया परन्तु मैं यह जानना और चाहती हूँ।

भगवन् क्या यह मानो देखो पृथ्वी कहाँ प्रतिष्ठित हो जाती है? उन्होंने कहा जल में, यह जल मग्न हो जाती है। जल मानो देखो यह अपने में धारण कर लेता है और अपने में धारण करता हुआ जलम् ब्रह्मे देखो जल में वृत्ति कहलाता है।

जल कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मेरे प्यारे ! उन्होंने पुनः प्रश्न किया कि महाराज यह जो जल है यह कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा यह जल अग्नि में रहता है। अग्नि जल को निगल जाता है, इसका परमाणु रूप बना देता है। मानो देखो इसी में यह ओत-प्रोत होता है।

अग्नि कहाँ रहती है?

उन्होंने कहा कि महाराज यह अग्नि कहाँ? उन्होंने कहा

अग्नि वायु में प्रतिष्ठित हो जाता है। जहाँ वायु है वहीं अग्नि विद्यमान है और जहाँ वायु नहीं रहता वहाँ अग्नि भी शान्त हो जाती है। तो मेरे प्यारे ! देखो ऋषि ने कहा क्या हे देवी अमृतम् ब्रह्मा अग्रे तत्वा मानो देखो यह जो गति है, वायु है यही प्राण वर्धक कहलाई जाती है। माता के गर्भस्थल में जब शिशु अपने शरीराम देखो पंच महाभूतों के शरीर को धारण करता है तो उस समय यह पंच महाभूतों के शरीर को धारण करता है तो उस समय यह पंच मानो देखो दस प्राण वायु के दस भाग बन करके ही तो शरीर में प्रवेश होते हैं। मानो प्राण, अपान, नाग, देवदत्त, धनञ्जय यह दस प्राण अपने में प्रतिष्ठित हो जाते हैं जैसे प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कुरु और कृकल यह दसों प्राणों के अकृतों में ओत प्रोत हो जाता है। तो मानो देखो इस प्रकार जब ऋषि ने कहा क्या यह वायु के ही दस भाग कहलाते हैं और वही भाग देखो मानो माता के शरीर में हैं, वही प्राणों के भाग इस ब्रह्माण्ड को स्थिर किए रहते हैं। मानो देखो वही प्राण स्वरूप बन करके अपने में धारयामि बने रहते हैं।

वायु कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मुनिवरो ! देखो ऋषि ने जब इस प्रकार अपना वाक् प्रगट किया तो देवी ने पुनः नत-मस्तिष्क हो करके कहा प्रभु मैं जानना यह और चाहती हूँ कि वायु कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा यह जो वायु है यह अग्नि में ब्रह्मणम् ब्रव्हे अग्नि वायु और वायु देखो अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत रहता है। क्योंकि जहाँ भी वायु गति करता है वह अन्तरिक्ष कहलाता है। वह परमाणुओं को लिए हुए भ्रमण करता रहता है। वैज्ञानिकजन इसी के ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं और वह वायाम् भूतम् देखो वायु में जो नाना प्रकार के तीन प्रकार के परमाणु गति करते रहते हैं वह अन्तरिक्ष में रहते हैं और अन्तरिक्ष में ही मानो देखो उसे अवकाश के रूप में माना गया है, यह अवकाश है।

इस प्रकार मुनिवरो ! देखो ऋषि ने कहा कि हे देवी आगे तुम जो उच्चारण करना किए जाओ। तो मुनिवरो ! देखो ऋषि मुनियों के उच्चारण करने की शैली बड़ी विचित्र रही है—उन्होंने ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में।

अवकाश कहाँ रहता है?

उन्होंने कहा ब्रह्मणे व्रातम देवत्वाम् हे प्रभु ! अमृतम् मैं और जानना यह चाहती हूँ क्या यह अवकाश कहाँ रहता है? उन्होंने कहा देवी शून्याम भूतम् ब्रव्हे बिन्दु त्वाम यह बिन्दु होता है और मानो इसे हम महत्तत्त्व के रूप से वर्णन करते रहते हैं।

महत्तत्त्व कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

उन्होंने कहा कि यह महत्तत्त्व कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा कि यह महत्तत्त्व यह मंगलम् देखो चन्द्रमा में ओत-प्रोत हो जाता है। चन्द्रमा ही तो अमृत देने वाला है। चन्द्रमा ही तो रात्रि के असम भोग में रमण करता रहता है यह तो स्वामनकृत कहलाता है। तो मानो देखो जब चन्द्रमा में यह महत्तत्त्व अपने में प्रतिष्ठित हो जाता है—माता के गर्भस्थल में मानो देखो चन्द्रमा की आभा, चन्द्रमा की छठा को ले करके माता के गर्भस्थल में शिशु अपनी निर्माणीत्ता को प्राप्त होता रहा है। तो मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने यह चन्द्रमा ही तो अमृत को देने वाला है। यह चन्द्रमा ही मुनिवरो ! देखो अपने में, अपनी आभा में परणित होने वाला है।

चन्द्रमा कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने कहा क्या भगवन् ! यह चन्द्रमा कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा यह चन्द्रमा सूर्य लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है। यही तो प्रकाश के देने वाला है। यह द्यु से प्रकाश लेता रहता है और द्यु से प्रकाश ले करके ही मानो यह संसार को प्रकाशमान बनाता है। रात्रि को अपने गर्भ में धारण

कर लेता है और यह मानो देखो प्रकाश का पुञ्ज कहलाया जाता है। वैदिक साहित्य में कहीं सूर्य को उद्यन कहते हैं क्योंकि यह उदय होता है। कहीं सूर्य को अदिति कहते हैं क्योंकि यह मानो देखो यह बारह माहो का निर्माण करने वाला है। यह अदिति कहा जाता है। तो इसी प्रकार यह चन्द्रमा कहीं मानो भास्कर है, यह भास रहा है। कहीं मानो देखो सूर्य को हमारे यहाँ वरणकेतु कहा जाता है। चन्द्रमा को भी वरणकेतु कहते हैं, सूर्य को भी कहते हैं। तो आज मैं बेटा ! तुम्हें पर्यायवाची शब्दों में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार क्या मुनिवरो ! देखो इसको विष्णु कहते हैं। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में विष्णु नाम सूर्य का है और विष्णु उसे कहते हैं जो पालना करने वाला है। यह यौगिक शब्दों में प्रतिपादित होता है। क्या जो पालना करता है उसी का नाम विष्णु है। तो वैदिक साहित्य में बेटा ! इसके बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं क्योंकि विष्णु नाम परमात्मा का है, वह पालक है। विष्णु नाम सूर्य का है वह नाना प्रकार की ऊर्जा के द्वारा प्रकाश देता रहता है। इसी प्रकार मुनिवरो ! देखो विष्णु नाम माता का है। माता के द्वारा हमारी पालना हो रही है। वह भी विष्णु के रूप से वर्णित किया गया है। विष्णु नाम यज्ञोमयी विष्णु क्योंकि यह यज्ञोमयी विष्णु इसलिए क्योंकि यह भी पालक है। ऊर्ज्या को नष्ट करने वाला है और पालना में अपना सहयोग देता है तो इसका नाम विष्णु है। तो बेटा ! आज मैं तुम्हें पर्यायवाची शब्दों में विशेष नहीं ले जा रहा हूँ। केवल ये क्या हमारे यहाँ नाना प्रकार की आभाओं में प्रायः देखो यह सूर्य रत्त रहता है। तो चन्द्रमा सूर्य लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है।

सूर्य कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मेरे प्यारे ! देखो देवी ने कहा प्रभु ! यह भी मैंने जान लिया। जब मैं आचार्य कुल में प्रायः अध्ययन करती थी तो मुझे यह वर्णन किया जाता परन्तु मैं ये और जानना चाहती हूँ क्या

यह सूर्य कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा सूर्य यह गन्धर्व लोकों में ओत-प्रोत हो जाता है। हमारे यहाँ देखो यह जो नाना प्रकार के लोक लोकान्तर अपने में मानो ग्रसित हो रहे हैं। इन लोकों में ब्रह्मणे देखो अवृतम यह सौर मण्डलों का जो आधिपत्य कहलाता है। वह मुनिवरो ! देखो उसको गन्धर्व कहा जाता है। हमारे यहाँ जब लोकों की गणना करते-करते माला बनने लगती है तो माला का अन्तिम देखो मनका बन करके वह गन्धर्व कहलाता है। इस गन्धर्व में सब ओत-प्रोत हो जाते हैं।

गन्धर्व कहाँ प्रतिष्ठित है?

मेरे पुत्रो ! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया देवी ने कहा प्रभु यह गन्धर्व कहाँ प्रतिष्ठित है? उन्होंने कहा गन्धर्व इन्द्र लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह इन्द्र एक लोक भी कहा जाता है। इन्द्र नाम परमपिता परमात्मा का भी है। इन्द्र नाम सूर्य का भी है। इन्द्र नाम राजा का भी है। तो यहाँ नाना प्रकार से मानो देखो इन्द्र की प्रतिष्ठा अपने में इन्द्रित होती दृष्टिपात होती रही है। तो आओ मेरे प्यारे ! देखो आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है क्या हम मुनिवरो ! देखो अपने गम्भीर मुद्रा में प्रवेश करते हुए देखो उस आभा में रत्त हो जाए।

इन्द्र कहाँ प्रतिष्ठित होता है?

मुनिवरो ! देखो जब चाक्राणी गार्गी ने ये प्रश्न किया क्या गन्धर्वाम् भूतम् ब्रह्म लोकाम्। हे प्रभु ! ये मानो देखो इन्द्र कहाँ प्रतिष्ठित होता है? उन्होंने कहा इन्द्र प्रजापति में होता है इसलिए प्रजापति ही मानो प्रत्येक मानव प्रजावान बनना चाहता है। प्रत्येक मानव की इच्छा रहती है कि मैं प्रजावान बनूँ एको बहुधाम भूतम् ब्रह्मे एक से बहुत हो जाऊँ इसीलिए बेटा ! देखो उसकी कामना जागरूक होती रहती है। तो इसलिए उसे प्रजा—देखो हमारे यहाँ दो प्रकार की सन्तानों का जन्म होता रहा है। एक प्रजा है, एक

सन्तान कही जाती है। परन्तु देखो जो प्रजाम भूतम् जो प्रजा, मेरे प्यारे ! देखो जो प्रजापति पालक है वह प्रजा में ओत-प्रोत रहता है। वह इन्द्र प्रजापति में प्रतिष्ठित हो जाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो इन्द्रो भवम् ब्रह्मा लोकाम् ईशवन्जन्म ब्रहे देवत्वाम्। तो वेद का वाक् कहता है क्या वह जो प्रजापति है, मेरे प्यारे ! इन्द्र प्रजापति में ओत-प्रोत हो जाता है। देखो, इसीलिए प्रजा में, इन्द्र में इन्द्र ही ओत-प्रोत रहने वाला है।

प्रजापति कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मेरे पुत्रो ! चाक्राणी ने कहा प्रभु मैं व्याख्या नहीं चाहती। मैं यह जानना और चाहती हूँ कि यह प्रजापति कहाँ प्रतिष्ठित रहता है? उन्होंने कहा यह जो प्रजापति है, प्रजापति मानो देखो याग में प्रतिष्ठित हो जाता है तो यहाँ याग का वर्णन आता है। यागाम् भूतम् ब्रह्मा लोकाम्। **मेरे प्यारे ! जितना भी मानव का सुक्रियाकलाप है, सुकर्म है इन सर्वत्र का नाम याग कहा जाता है।** याग की विवेचना करते हुए ऋषि ने कहा है क्या यह संसार ही एक प्रकार की यज्ञशाला है। इसमें परमपिता परमात्मा मानो देखो ब्रह्मा बन करके इसका संचालन कर रहे हैं। आत्मा यजमान बन करके उसको भोगतव्य में प्राप्त हो रहा है। तो मानो देखो आत्माम् ब्रहे ये याग में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह प्रजा ही याग में रहती है। क्योंकि यदि शुभ कार्य, शुभ क्रियाकलाप नहीं रहेगा तो प्रजा भी नहीं रहेगी इसीलिए प्रजा को स्थिर रहने के लिए मुनिवरो ! देखो यागाम् भूतम् याग चाहिए।

याग कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?

मुनिवरो ! देखो चाक्राणी गार्गी ने पुनः प्रश्न किया प्रभु यह याग कहाँ प्रतिष्ठित रहता है, कहाँ प्रतिष्ठा को प्राप्त होता रहता है? उन्होंने कहा याग दक्षिणा में रहता है। दक्षिणा मम् ब्रह्मे

देवत्वाम्—**हमारे यहाँ दक्षिणा यजमान देता है** और दक्षिणा का अभिप्रायः यह है कि जो यजमान के अन्तःकरण में जो त्रुटियाँ हैं वह उनको जब दक्षिणा में परणित कर देता है तो उसका याग जब सफल होता है। **द्रव्य देना कोई दक्षिणा नहीं है।** द्रव्य देना तो उसके उदर की पूर्ति का एक साधन बना हुआ है परन्तु दक्षिणा का अभिप्राय यह कि जब तक अन्तःकरण की त्रुटियाँ नहीं जायेंगी हृदय से तब तक मुनिवरो ! देखो याग सफलता को प्राप्त नहीं होता। तो वेद का ऋषि कहता है, मन्त्र कहता है यागाम् भवितम् यागाम् दिव्यम् ब्रव्हा क्रतम हे यजमान तू अपने में दिव्य बन। हे यजमान अपनी त्रुटियों को त्याग करके उन्हें तू दक्षिणाम् ब्रह्मे आचार्यों को प्रदान कर जो यम है, जो यमराज कहलाता है, जो मृत्यु को विजय करने वाले हैं उन्हें तू मानो इन्हें परणित करता हुआ चल।

दक्षिणा कहाँ प्रतिष्ठित रहती है?

मेरे प्यारे ! देखो उस समय ब्रह्मणे चाक्राणी ने पुनः प्रश्न किया प्रभु मैं इससे आगे म्रमे यह जानना और चाहती हूँ क्या यह मानो दक्षिणा कहाँ प्रतिष्ठित रहती है? उन्होंने कहा दक्षिणा हृदय में रहती है। इसलिए मानव का हृदय पवित्र होना चाहिए और हृदय में जब पवित्रता आ जाती है तो मानव अपने में अपनेपन को प्राप्त हो करके परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। हृदयाम् गथम् ब्रह्मे द्योलोकाम् वाचस्सुतम् देवत्वाम् मानो देखो **यह हृदय ही श्रद्धा है। श्रद्धा में ही हृदय है।**

मेरे पुत्रो ! देखो **उन्होंने कहा चाक्राणी अति प्रश्न मत कर देना** अन्यथा तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जायेगा। उस समय चाक्राणी ने कहा शान्तम् ब्रह्मे। आगे प्रश्न नहीं किया। तो बेटा ! विचार-विनिमय क्या क्योंकि प्रश्नकर्त्ता, प्रश्न करता रहेगा, अन्त में

उत्तर देने वाला मौन हो जाता है और जब मौन हो जाता है तो प्रश्नकर्त्ता को अभिमान हो जाता है और अभिमान ही संसार में मृत्यु है। इसीलिए देखो मृत्युञ्जम ब्रह्मे, अति प्रश्न करना भी मृत्यु का मूल बन जाता है।

मेरे प्यारे ! देखो विचारवेत्ताओं ने कहा क्या यह संसार परमात्मा का हृदय है और इस हृदय में परमात्मा के हृदय से अपने हृदय का मिलान करते हुए अपने मानवीयत्व को प्राप्त हो जाना चाहिए। मेरे प्यारे ! देखो ब्रह्मणे व्रतम् देवत्वाम् ऋषि कहता है, याज्ञवल्क्य कहता है कि हृदय, **यह संसार परमात्मा का हृदय है, मानव के हृदय का जब दोनों का परस्पर समन्वय हो जाता है तो परमात्मा से मिलान हो जाता है।**

मानो देखो हृदय, हृदय से श्रद्धा, श्रद्धा से दक्षिणा, दक्षिणा से याग, याग से प्रजापति, प्रजापति से इन्द्र, इन्द्र से गन्धर्व, गन्धर्व से सूर्य और सूर्य से चन्द्रमा मानो देखो इस प्रकार मुनिवरो ! देखो ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ये ध्रुवाम् ब्रह्मणे मुनिवरो ! देखो यह संसार पृथ्वी में और पृथ्वी मुनिवरो ! देखो जल में और जल अग्नि में और अग्नि वायु में और वायु मुनिवरो ! देखो यह अमृति अन्तरिक्ष में, अवकाश में प्राप्त हो जाता है। तो ऋषि ने बेटा ! इस प्रकार ध्रुवा से ऊर्ध्वा में, ऊर्ध्वा से ध्रुवा में चाक्राणी को भ्रमण कराया। वह अपने में मौन हो गई और उसने कहा धन्य है प्रभु आप ने मानो देखो मेरे को प्रकाश में पहुँचाया है और मैं प्रकाश में पहुँच गई हूँ। प्रभु ! आप को धन्य है क्योंकि आप ब्रह्मवेत्ता हैं।

मेरे प्यारे ! वह अपने आसन पर विद्यमान हो गई और गार्गी ने यह कहा कि हे ब्रह्मवेत्ताओं ये याज्ञवल्क्य मुनि महाराज तुम सब ब्रह्मवेत्ताओं में सर्वश्रेष्ठ कहलाते हैं। आप कुछ इनके द्वारा प्रश्न करो या न करो परन्तु देखो यह आदरणीय हैं और यह अपने एक सहस्त्र गऊए जो ले गये हैं वह प्रशंसनीय है। मेरे

प्यारे ! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यह कहा क्या हे देवी ! गऊएँ तो मैं इसलिए ले गया हूँ क्या विद्यालय में उनकी आवश्यकता है। ब्रह्मचारियों के दुग्धाहार करने के लिए मैं गऊओं को ले गया हूँ मैं ब्रह्मवेत्ता जान करके नहीं। तो मेरे प्यारे ! विचार-विनिमय क्या आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान को जानने का प्रयास करें। यह है बेटा ! आज का वाक्।

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये क्या इस आत्मा के तीन गृह होते हैं—एक स्थूल, एक सूक्ष्म, एक कारण मानो देखो इसमें आत्मा सदैव रमण करता रहता है और मुनिवरो ! देखो यह आत्मा को जानने के लिए, संसार को जानने के लिए मैंने कुछ सूक्ष्म सा अपना वाक् प्रगट किया है। समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवाः आभ्याम् मनुगायनत्वाः यम मयाः।

ओ३म् देवाः यम सर्वाङ्गतम आभ्याम् मनाः।।

अच्छा भगवन् !

दिनांक : 14 सितम्बर, 1992

समय : प्रातः 10.30 बजे

स्थान : खुरर्मपुर-सलेमाबाद,

गाजियाबाद, उ.प्र.

॥ ओ३म् ॥

त्रिविद्या, त्रिवेणी और चक्र

जीते रहो,

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद-मन्त्रों का अभी हमने तुम्हारे समक्ष पाठ किया। आज के वेदपाठ में हम उस प्रभु का गान गा रहे थे जिस प्रभु ने हमारे जीवन के लिए तथा उसको महान् बनाने के लिए नाना प्रकार के पदार्थों को उत्पन्न किया है। उन पदार्थों को प्राप्त कर हम इस जीवन को श्रेष्ठ बना सकते हैं। आज हमें उस प्रभु से याचना अवश्य करनी चाहिये। क्योंकि वह ही लोक लोकान्तरों का स्वामी, वह ही हम सब का दाता सर्व संसार को धारण करने वाला है। वह हमारा साथी है। वास्तव में संसार भर में मनुष्य मात्र का साथी केवल वह प्रभु ही है, अन्य कोई नहीं, इसलिए उस प्रभु से याचना हमें अवश्य ही करनी चाहिए। मुनिवरो ! यदि हम उस प्रभु की आज्ञा के अनुकूल अपने कर्म करते हैं और उसकी आस्था में चलते हैं तो यह मानव का सच्चा साथी महान् प्रभु हमें सत्य ज्योति देकर अपनी ज्योतियों में लय कर लेते हैं।

सुन्दर जीवन का मार्ग

देखिए ! जैसे बालक माता व पिता के आदेश के अनुसार कर्म करता है, तो माता पिता को इससे बहुत प्रसन्नता होती है, इसी प्रकार जो सर्व संसार का महान् माता पिता परम प्रभु है, उसके अनुकूल जो कर्म करते हैं परमदेव परमात्मा अतीव प्रसन्न रहते हैं। उस समय हमारा जीवन सुन्दर बन जाता है और हम उसके समक्ष जाने के पात्र बन जाते हैं। हमारा संसार में आने का उद्देश्य उस प्रभु का पात्र बना होना चाहिए, कुपात्र नहीं। यदि हम आज प्रभु के इस संसार में उसके नियम

विरुद्ध कार्य करते हैं तो कुपात्र बन रहे हैं। यदि उसकी आज्ञानुसार कार्य करेंगे तो हमारी आत्मा एक दिन उस रमणीय प्रकाशवान प्रभु का रम्य प्रकाश पाएगी। उसकी अद्वितीय शरण में पहुँच कर उसके आँगन में पहुँच जाएगी और उस महान् प्रभु को अपने समक्ष पाएगी, जो सर्व संसार को धारण कर रहा है। परन्तु यदि हम परमात्मा के अनुकूल कोई कार्य नहीं करते और महान् बनना चाहते हैं तो कैसे बनेंगे? भाई एक तो यह कहता है कि परमात्मा के अनुकूल कर्म करने से उच्च बनेंगे और दूसरा कहता है कि परमात्मा के प्रतिकूल कार्य करके।

मुनिवरो ! आज के मानव का महानन्द जी द्वारा किये गये प्रश्नों से परिचय मिल जाता है। महानन्द जी ने एक समय तथा अन्य कई स्थान पर कहा है कि आज के मानव और पूर्वकाल के मानव में बड़ी भिन्नता आ रही है। तो वह भिन्नता क्या है?

द्रव्यपति और परमात्मा

एक समय महानन्द जी ने कहा कि वास्तव में सबसे पहला भेद यह है कि आज का मानव द्रव्यमय हो रहा है। वह द्रव्यपति बना हुआ है। संसार में सब कुछ द्रव्य ही मान लेता है। मुनिवरो ! वास्तव में मानव जिस काल में माया के पीछे पड़ जाता है तो उसका जीवन क्षण भंगुर बन जाता है। उस मानव का जीवन आज नहीं तो कल अवश्य समाप्त हो जाएगा। हमारा आज का वाक्य यह नहीं कहता कि द्रव्य नहीं होना चाहिए। **हमारा तो यह आदेश है कि द्रव्य हो तो भी उस प्रभु की आज्ञा में रह कर कर्म करो** यदि प्रभु के विरुद्ध चलोगे, माया का सदुपयोग न करोगे तो तुम्हारा क्षण भंगुर जीवन समाप्त हो जायेगा। मुनिवरो ! हमारे वेदों में बहुत से मन्त्र आते हैं, जिसमें कहा गया है कि जिस राजा के राष्ट्र में, जिस राजा की प्रजा देखो ! द्रव्य का अच्छी प्रकार सदुपयोग किया करती है, उस माया से वह समय बड़ा कल्याणकारी बनता है। उस काल की इतनी महत्ता है कि उस काल को सतयुगी काल कहते हैं। मुनिवरो ! माया एक प्रकार की **शकुन्तका**

मानी गई है जो राष्ट्र को उच्च बनाने वाली है। शकुन्तका नाम विद्या का भी है। यहाँ तो लक्ष्मी में शकुन्तका का संकेत है, यह वास्तव में हमारा कल्याण करने वाली ही है। परन्तु इस प्रकार नहीं, यह तो तब ही हमारा कल्याण करेगी जब राजा के राष्ट्र में इस प्रकार के बुद्धिमान मानव व बुद्धिमति देवकन्या होंगी।

वह काल सबसे उच्च माना गया है और उसी काल में इसको शकुन्तका कहते हैं और नहीं तो वह क्लेश देने वाली है। जिस काल में अज्ञानता से इसका दुरुपयोग करते हैं उस काल में इसको क्लेशदायक माया भी कहते हैं। परन्तु जिस काल में बुद्धिमान होते हैं और सदुपयोग होता है और मन के अनुकूल कार्य करते हैं उस काल में इस माया को हम लक्ष्मी शकुन्तका कहा करते हैं। हमारे आदि ऋषियों ने ऐसा ही कहा है। उसी के अनुकूल आज हम तुम्हारे समक्ष इस वार्ता को उच्चारण कर रहे हैं।

तो मुनिवरो देखो ! अभी-अभी हम व्याख्यान दे रहे थे। व्याख्यान यह चल रहा था कि **मानव को उस प्रभु के अधीन होकर उसकी आज्ञा में चलना चाहिए।** परमात्मा के आदेशों के विरुद्ध जो व्यक्ति चलता है वह मानव न होने के तुल्य माना गया है।

परमात्मा और आत्मा

मुनिवरो देखो ! यहाँ ऐसा कहा गया है कि परमात्मा का जब आत्मा को ज्ञान होता है तो यह प्रभु का ज्ञान है और प्रभु ने दिया है। किसको दिया है? अपने बालक आत्मा को दिया है। परन्तु **यह आत्मा बालक प्रभु की आज्ञा में ही चल कर उच्च बनता है** क्योंकि वह विद्या जिससे आत्मा उच्च हुआ है, जिससे हम उच्च हुए हैं, वह परमात्मा की ही दी हुई है। परन्तु **इस विद्या का हम सदुपयोग करके और वेद के अनुकूल अपने कार्य को करते हैं तो हमारा जीवन, अहा ! कैसा सुन्दर बन जाता है।** हम संसार में ऐसे बन जाते

हैं जैसे वह सूर्य तीन लोकों को तपायमान करने वाला है। इसी प्रकार मुनिवरो ! आत्मा अपने जीवन को इस प्रकार का बना लेता है। वह तीनों लोकों को तपायमान करने वाला होता है।

शिव, गंगा और त्रिविद्याओं का रहस्योद्घाटन

जैसे आज के वेदपाठ में बहुत ही सुन्दर वर्णन आ रहा था। आज हम गंगा का वर्णन कर रहे थे। आह ! हमारे वेदपाठ में गंगोत्री आदि कई शब्द आये हैं। आह ! कैसा कहा है। हमारे आदि ऋषियों ने गंगा अवतरण को कहा है। देखो ! ब्रह्मलोक से ब्रह्मा ने हमारे लिये तीन गंगाएँ नियुक्त की हैं, एक आकाश गंगा है, दूसरी महान् अन्तरिक्ष लोकों की गंगा है तीसरी हमारे मृतमण्डल में बहने वाली गंगा है।

शंकर नाम किसका है? बेटा ! शंकर नाम परमात्मा का है।

इस संसार तथा इस गंगा को धारण करने वाले को बेटा ! शिव कहा जाता है। अच्छा वह कौन सा शिव है? वह किसको कहते हैं?

बेटा ! हम पूर्व स्थान में कई बार व्याख्यान दे चुके हैं। वह शिव नाम तो राजा का भी है। शिव नाम सूर्य का भी है, शिव नाम परमात्मा का भी है। परमात्मा को शिव कहते हैं जो गंगाओं को धारण करने वाला है। बेटा ! शिव नाम पर्वतों का भी है क्योंकि नाना प्रकार की धातुओं से शिव शब्द बना करता है। यहाँ पर्वतों का नाम भी शिव कहा गया है। मुनिवरो देखो ! हमारा केवल यह व्याख्यान चल रहा था कि उस परब्रह्म ने हमारे लिए तीन प्रकार की गंगाएँ अवतरित की हैं। देखो एक आकाश गंगा है, जो अन्तरिक्ष को रमण करने वाली है। एक मधोति गंगा है वह ब्रह्मलोक में रमण करने वाली है और तीसरी हमारी मृत मण्डल में रमण करने वाली गंगा है। अहा ! यह तीन प्रकार की गंगाएँ हमारे लिए नियुक्त की गई हैं। आज मानव को इन तीन गंगाओं में स्नान करना चाहिए। जो मानव इन गंगाओं में स्नान नहीं करता, उस मानव का जीवन व्यर्थ है।

मुनिवरो देखो ! आकाश गंगा कौन सी है और वह मृत मण्डल की गंगा कौन सी है? अहा मुनिवरो ! पहले तो हम इन गंगाओं का निरक्षण कर देवें जो परमात्मा ने हमें त्रिविद्या दी हैं। परमात्मा ने हमें सृष्टि के प्रारम्भ में त्रिविद्या दी हैं। बेटा ! वे त्रिविद्या कौन सी हैं? वे तीनों वेद हैं जो वास्तव में हमारे लिये गंगा सदृश माने गये हैं और **त्रिविद्या को ही गंगा कहा है।** मुनिवरो देखो ! एक वह विद्या है, जो मृत्यु लोक में गंगा सी बह रही है। जिसमें हम कर्म किया करते हैं। आह ! जिस वेद का अध्ययन करने से हमें कर्म क्षेत्र (संसार में) कर्म करने का ज्ञान हो जाता है कि हमें क्या करना चाहिए, और किस प्रकार चलना चाहिए, राष्ट्र का कैसे निर्माण करना चाहिए आदि। मुनिवरो देखो ! उसी विद्या को हम मृत लोक की गंगा कहते हैं।

बेटा ! माता का बालक जब माता के समक्ष जाकर माता के चरणों को स्पर्श किया करता है अहा ! जब वह स्पर्श करता है तब माता कहती है आशीर्वाद, बेटा तुम आयुष्मान रहो। तो मुनिवरो ! ऐसी माता धन्य है जिसे इस प्रकार का बेटा प्राप्त हो। यह शिष्टाचार हमें कौन सिखाता है, वह कौन सी विद्या है? ये हमारे पूर्व वेद ही हैं, जो हमारा प्रथम कर्म है उसको कर्म काण्ड कहते हैं। अहा ! पूर्व वेद में हमारे लिए कर्म काण्ड भी है, साथ-साथ उसके ज्ञान भी है।

मुनिवरो ! आज हमें कर्म काण्ड में पहुँच जाना चाहिए, क्योंकि हमारे यहाँ इस प्रकार की गंगा है, परमात्मा ने दी है

मुनिवरो ! मृत लोक में बहने वाली गंगा जिससे हम भौतिक कार्य करते हैं, जिससे हम नाना प्रकार के बड़े से बड़े यन्त्र नियुक्त कर देते हैं। अहा ! जब हम कर्म-काण्ड को पाते हैं, उस समय आत्मा के अन्तर को जान लेते हैं। अहा ! हमारा जो मन है बड़ा विभु है, बड़ा मधुर है। मुनिवरो ! यहाँ विभु होने के नाते, यह नाना प्रकार की योजनाएँ बनाता है। हम कर्म काण्ड करते उच्च बन जाते हैं कि मन के विषय को अच्छी प्रकार जान लेते हैं और वह मन कहाँ जाता है? कहाँ के

चित्र ले आता है? कहाँ-कहाँ के चित्र अन्तःकरण में विराजमान कर देता है? मुनिवरो ! जब कर्म काण्ड में लिप्त हुआ मानव सृष्टि को जान लेता है, जब इस महान् गंगा में स्नान करता है तो इतना निर्मल और स्वच्छ हो जाता है कि वह हर प्रकार से पवित्र होकर बेटा ! ऊपर को उठना प्रारम्भ कर देता है।

एक समय बेटा ! रावण ने अपने पुत्र नरान्तक से कहा था 'क्या भाई ! तुमने यह भी जाना है कि यह भौतिक गंगा कौन सी है?'' बेटा ! मृत मंडल में बहने वाली गंगा कौन सी है? उस समय मुनिवरो ! रावण के पुत्र नरान्तक ने कहा...कि मैंने तो अब तक यह जाना है, यह जो मृत्यु लोक में बह रही है यह भगवन् ! कर्म काण्ड है, यह हमें नाना प्रकार के यन्त्रों का ज्ञान दे रहा है जिससे राष्ट्र का बहुत ऊँचे से ऊँचा कार्य कर सकते हैं। राष्ट्र में कोई बड़ी से बड़ी विपत्ति आ जाये तो उसको भी हम सह सकते हैं। वास्तव में उन यन्त्रों से उन सुविधाओं को बनायें, यह हमारी भौतिक गंगा है।''

देखो मुनिवरो ! कई स्थलों में निर्णय दिया है कि स्नान करने से शरीर पवित्र हो जाता है, इस प्रकार बेटा ! **कर्म काण्ड करने से मन की शुद्धि होने लगती है केवल शासनमात्र से इन्द्रियाँ शुद्ध हो जाती हैं।**

मुनिवरो ! तो ऐसा समय आया, महर्षि ककुड़ी महाराज ने राजा रावण से यह प्रश्न किया, कि तुम चारों वेदों के ज्ञाता हो, इस त्रिविद्या के जानने वाले हो, हमें यह निर्णय दो कि राजा राष्ट्र का पालन किस प्रकार से कर सकता है? उस समय राजा रावण ने कहा था हे महाराज ! मैंने तो त्रिविद्या से और वेदों की विद्या से यह अध्ययन किया है और यही पाया है कि इसमें स्नान करते-करते मेरी इन्द्रियाँ इतनी पवित्र हो गई हैं कि मैं राष्ट्र का पालन इस प्रकार कर सकता हूँ कि मेरे राष्ट्र की जितनी प्रजा है मेरे शासन में रह करके मेरा बहुत ही ऊँचा कार्य करेगी। तो महर्षि ने कहा अरे भाई ! यह जो भौतिक गंगा है, तुम्हें

विनाश को प्राप्त कराने वाली है, तुम विनाश की क्यों सोच रहे हो? तो उस समय रावण ने कहा कि भगवन् ! क्या करूँ यह तो मेरा भोग है, ऐसा ही मेरा स्वभाव बन गया है और वैसा ही बनता चला जायेगा। यदि मैं श्रेष्ठ स्वभाव बनाऊँ, उच्च बनूँ तो भगवन् ! राष्ट्र का मैं इस प्रकार पालन नहीं कर सकूँगा। उस समय ककुड़ी महाराज ने कहा हे रावण ! यदि तुम यह जानो कि मैं उच्च बनकर राज्य का पालन नहीं कर सकूँगा तो यह तुम्हारी महान् भूल है। तो मुनिवरो ! रावण इतना बड़ा ज्ञानी होता हुआ भी अज्ञानी था उसमें यही अज्ञानता नहीं थी कि वह अपने भौतिक विज्ञान को ही सब कुछ समझता था परन्तु वह जो आकाश गंगा बह रही है उसे नहीं जानता था। जो अन्तरिक्ष में रमण कराने वाली विद्या है इसको न प्राप्त करके मानव अपना जीवन समाप्त करता चला जा रहा है। तो मुनिवरो देखो ! हमें महानन्द जी का कई काल में संकेत मिलता है, कई कालों में इन्होंने कई वार्तायें नियुक्त की हैं उनमें से एक आधुनिक काल की भी वार्ता थी।

मुनिवरो देखो ! यदि मानव को वैज्ञानिक बनना है, मानव को आध्यात्मिक या भौतिक विज्ञानी बनना है तो पूर्व यह देखो, **यह जो तुम्हारी गंगा बह रही है जिसको कर्मकाण्ड कहते हैं, अहा ! कर्मकाण्ड में तुम अपना स्नान करो। कर्म-काण्ड किसको कहते हैं?** बेटा ! कर्म काण्ड कहते हैं जो वेद ने हमें क्रिया नियुक्त की हैं, आज हम उन क्रियाओं में लुप्त हो जायें। मुनिवरो ! जब हम इस गंगा को अच्छी प्रकार जानने लगते हैं तो हमें ज्ञान होता है अरे ! जहाँ से गंगा बह रही है वहाँ भी हमें जाना है। देखो ! जब मानव गंगा के किनारे चलने लगता है तब चलता चलता मुनिवरो ! वह वहाँ पहुँच जाता है जहाँ शिव से वह गंगा उत्पन्न हुई है। वह शिव के संकल्प द्वारा मुनिवरो ! उस आकाश गंगा में जाता है उसे ही देखो ! अन्तरिक्ष गंगा भी कहते हैं। अहा उसमें रमण करने से ज्ञान होता है, आत्म-ज्ञान होता है।

आत्म-ज्ञान और गंगा स्नान

हमें इस अन्तरिक्ष गंगा में कैसे स्नान करना चाहिए? मुनिवरो !

आगे ऐसा कर्मकाण्ड आ जाता है। अक्षय जो वेद की विद्या है उसको उपासना काण्ड कहते हैं। अहा ! हम उपासना काण्ड में आकर उपासना करने लगते हैं और प्रभु का गान गाने लगते हैं। गान गाते-गाते बेटा ! हम ऊँचे शिखर पर चले जाते हैं। जैसे तुमने महाराजा शिव को देखा होगा। महाराजा शिव शंकर ने देखो ! राजा दक्ष के द्वारे संस्कार करते-करते उन्होंने यह नाद गाया और कैसा नाद गाया कि वह तीनों लोकों को शब्दायमान करने लगा। यह नाद इतना पवित्र था कि इस गान को पाते-पाते बेटा ! माता पार्वती मुग्ध हो गई और नाना प्रकार की सब योनियाँ भी मुग्ध हो गईं। मुग्ध होते-होते बेटा ! वह उस पर्वत पर जा पहुँचे जिसको कैलाश कहा जाता है और वह कौन सा कैलाश है? बेटा ! हम पूर्व वर्णन कर चुके हैं कि मानव जब इस प्रकार के गान गाता है तो ऊँचे कैलाश पर्वत पर चला जाता है।

कैलाश किसको कहते हैं? कैलाश नाम तो बेटा ! आत्मा का है। जब आत्मा परमात्मा की याचना में चला जाता है और परमात्मा की आज्ञा में चलता हुआ परमात्मा की गोद में चला जाता है तो उस समय यह मानव का शिव नाद कहा जाता है। अहा ! मुनिवरो ! व्याख्यान देते हुए हम कहाँ पहुँच चुके हैं। आज तो हमारा यह विषय नहीं था। हम उच्चारण कर रहे थे कि परमात्मा ने तीन गंगा हमारे लिए उत्पन्न की हैं—पूर्व मृतमण्डल की गंगा, द्वितीय आकाश गंगा, है जो बेटा ! अन्तरिक्ष में रमण कर रही है। जिस समय वह आत्मा उच्च नाद गाता है। अहा ! तो बेटा ! उस समय वह अनन्त गान गाता हुआ उस गंगा में स्नान करता है और पवित्र हो जाता है। फिर पवित्र होने पर जो कर्मकाण्ड इन्द्रियों का बन्धन है उस कर्मकाण्ड से भी इन्द्रियाँ पृथक हो जाती हैं, उस समय उन सबके विषय छूट जाने से केवल एक नाद रह जाता है और जब यह ऐसा नाद गाता है, तो बेटा ! नाद गाते-गाते अन्तरिक्ष को भी त्याग देता है और यह जान जाता है कि नाद कहाँ से आता है और कहाँ यह नाद भरा हुआ है, कौन सी वह

विद्या है जो अन्तरिक्ष में भरी हुई है जिसमें स्नान करने से हमें सर्व विद्यायें आ जाती हैं, वह हमारी उपासना है।

जब उपासना काण्ड में पहुँचते हैं तो परमात्मा के समक्ष पहुँच जाते हैं। मुनिवरो देखो ! उस समय हमारा ज्ञान काण्ड आता है जब उपासना भी पूर्ण हो जाती है और कर्मकाण्ड भी पूर्ण हो जाता है तब प्रकाश के सागर में पहुँच जाते हैं और परमात्मा की साक्षात् गोद में चले जाते हैं।

अहा ! मुनिवरो देखो ! अभी-अभी हमारा क्या व्याख्यान चल रहा था। हम प्रारम्भ कर रहे थे जो आदि ऋषियों ने हमें निर्णय दिया है। आज हम दार्शनिक विषय का वर्णन कर रहे थे क्योंकि परमात्मा ने हमारे लिए तीन प्रकार की गंगा उत्पन्न की हैं अहा ! तीन प्रकार की. ..अहा ! मानव संसार में आकर के मानव जीवन को पाकर के त्रिविद्या को प्राप्त नहीं किया तो उसका जीवन भी कुछ नहीं। वह मानव कहलाने का अधिकारी भी नहीं।

देखो मुनिवरो ! आज हमारा उद्देश्य क्या है? **मानव का इस संसार में आने का उद्देश्य भी त्रिविद्या पाने का है।** जो संसार में आकर त्रिविद्या को नहीं जानता वह मानव मानो संसार में अपने जीवन के विषय को नहीं जानता। आहा ! हमें इसे विचारना चाहिए, आज हमें बड़ा खेद होता है, आश्चर्य होता है। महानन्द जी कहाँ-कहाँ के प्रश्न करके हमारे समक्ष नियुक्त कर देते हैं परन्तु उन प्रश्नों का उत्तर कभी हम नहीं भी दिया करते और दे भी देते हैं यथाशक्ति जितनी हमारी शक्ति है उसके अनुसार।

परन्तु देखो बेटा ! हमारा वेद का पूर्व काव्य तो यही है। क्या करें बेटा ! हमने तो कुछ गान गाया ही नहीं। न कोई स्नान ही किया है। फिर भी हम स्नान और त्रिविद्धा को पाकर के अधूरे बन बैठे हैं। क्यों बन बैठे हैं? मुनिवरो ! मानव के द्वारा कर्म की गति इतनी गहन आती है कि न जाने कहाँ-कहाँ पहुँचा देती है बेटा ! **एक कर्म गंगा**

है, एक उपासना गंगा है, एक ज्ञान गंगा है, तो मुनिवरो ! हमें तीनों गंगाओं में स्नान करना चाहिए। शिव संकल्प, शिव की जटाओं से गंगा उत्पन्न होती है तो मुनिवरो ! शिव नाम तो परमात्मा का है, तो यह गंगाएँ परमात्मा से उत्पन्न होती है। अहा ! परमात्मा (शिव) की जटायें क्या हैं जिससे यह तीन गंगा उत्पन्न होती हैं, तो मुनिवरो देखो ! यह जो जटा रूपी वाणी है, जटा नाम बेटा ! वाणी का है। जटा नाम गान का है अहा ! शिव की जटाओं से जब यह वाणी, यह महान् गंगा उत्पन्न होती है तो बेटा ! मृत मण्डल में और ब्रह्मलोक में और अन्तरिक्ष लोक में, तीनों लोकों में गान करती है। यह तीनों गंगा महान् सुख सागर हैं। आज हमें इन्हें पाना चाहिए, आज इन विद्याओं को जान करके, हमें, वास्तव में संसार सागर से पार होना चाहिए। **हमारे संसार में आने का उद्देश्य यही है कि हम उन गंगाओं को जान लेवें, जो परमात्मा ने हमारे लिए नियुक्त की हैं।** अहा ! परमात्मा ने, शिव महाराज ने सृष्टि के प्रारम्भ में यह कैसी गंगा उत्पन्न की बेटा ! हमारे महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया कि यह जो गंगा है ब्रह्म-पुत्री कही जाती है। क्योंकि जो वाणी होती है वह उसके अधीन होती है और जो जिसके अधीन होता है, वह उसके बालक के तुल्य होता है। इसलिए बतलाया कि यह जो वेदवाणी है, शिव की जटाओं से उत्पन्न हुई है। मुनिवरो ! ब्रह्मा के द्वार से आई है। यह ब्रह्मा की पुत्री है। **ब्रह्मा नाम बुद्धिमान का है** और जिसकी वाणी जिसके शासन में हो, उसको ब्रह्मा कहते हैं। और यह ब्रह्मविद्या जिसके कंठ में हो उसके शासन में रहने वाली हो अहा ! उसी को ब्रह्मा कहते हैं। और वेद की विद्या उसकी पुत्री मानी गई है। मुनिवरो ! यहाँ वृत्तान्त चल रहा था क्या? उपदेश दे रहे थे कि यह विद्या उसी को आती है जिसका हृदय महान् होता है। यहाँ ऐसा कहा गया है, बेटा ! कि मधुज्ञान से मधुरता उत्पन्न होती है।

वेदों का अवतरण

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी इसमें हमने एक वाक्य और सुना

है। हम जब भ्रमण कर रहे थे, तब हमने सुना कि ब्रह्मा ने वेद बनाया और द्वापर काल में महर्षि व्यास ने इनके चार अंग बना दिए। तो यह वार्ता कहाँ तक यथार्थ है? इसके दो पक्ष हमारे समक्ष चल रहे हैं। एक पक्ष तो यह कहता है कि ये चारों वेद अनादि ऋषियों ने उत्पन्न किए, ऋषियों की वाणी से आये और कुछ कहते हैं नहीं, ब्रह्मा ने एक वेद सृष्टि के प्रारम्भ में ही बनाया और उसके पश्चात् जो द्वापर काल आया, महर्षि व्यास ने इसके चार विभाग बना दिए, जिसको हमने कभी-कभी वर्णन किया है। यह चार काण्ड, एक ज्ञान काण्ड है, एक कर्म काण्ड, एक उपासना और एक विज्ञान काण्ड। तो हम इन वार्ताओं को आपके मुखारबिन्द से जानना चाहते हैं।

अच्छा बेटा महानन्द ! जो ऐसा कहते हैं कि महर्षि व्यास ने एक वेद के चार काण्ड बना दिए तो महानन्द जी हम एक वार्ता और जानना चाहते हैं सिद्धान्त के अनुकूल, सिद्धान्त में क्या ऐसा देखा भी गया है कि द्वापर, कलियुग, त्रेता और सतयुग इनका रूपान्तर होता रहता है। जैसे आज द्वापर गया और फिर त्रेता भी गया, और सतयुग भी गया, और फिर आयेगा कलियुग—तुम्हें उन व्यक्तियों से प्रश्न करने चाहिए थे कि क्या व्यास मुनि हर युग में रूपान्तर कर देते हैं? या वेदों की परम्परा से ऐसा चला आ रहा है? क्योंकि यह न मानने वाला वाक्य हो जाता है। सबसे पूर्व यह मानो कि ब्रह्मा ने एक वेद बनाया। हम तुम्हारी वार्ताओं को मान लेते हैं, परन्तु द्वापर काल में महर्षि व्यास हुए और उन्होंने वेद के चार विभाग बना दिए, तो हम जानना चाहते हैं द्वापर काल में ही इनका रूपान्तर करते हैं या परम्परा से ऐसा है? या व्यास मुनि ने सृष्टि के आरम्भ से इसके चार भाग किए या द्वापर काल में कर दिए, तो क्या हर काल में करते हैं? हास्य.....

तो बेटा! यह हमारा प्रश्न है इसका उत्तर भी तुम दो। हास्य....।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी। इसका उत्तर यह है कि ऐसा हो सकता है कि द्वापर काल में इनकी एक ही संगति हो और एक ही

बन जाते हों सतयुग काल में। और द्वापर काल में महर्षि व्यास इनके चार विभाग बना देते हों।

अच्छा तो महानन्द जी ! क्या तुम्हारा यह वाक्य कोई मान लेगा? हम यह जानना चाहते हैं कि वेदों पर क्या आपत्ति आ गई और क्या बुद्धिमानों पर आपत्ति आ गई थी जो वेद का एक भाग बना दिया सतयुग में। हर सतयुग में एक भाग बन जाता है और व्यास जी पर क्या आपत्ति आ गई कि चार भाग बनाने पड़े उन्हें। हम यह जानना चाहते हैं।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी ऐसा है कि कलियुग काल आता है, द्वापर काल आता है ऐसा कहते हैं कि द्वापर का जो काल कुछ ऐसा आता है जिसमें अज्ञानता आती है और अज्ञानता के आ जाने के कारण, व्यास मुनि इनके चार भाग कर देते हैं।

अच्छा बेटा ! तुम्हारी वार्ताओं को मान लेंगे, परन्तु हम कैसे मानें, जब हमने व्यास मुनि को देखा है, कैसे मानें इस व्याख्यान को, माना नहीं जाता तो विश्वास भी नहीं होता। बेटा ! यह सिद्धान्त लेते हैं, तो सबसे पूर्व यह है कि हमारा वेद तो यह कहता है। वेद क्या ऋषि भी ऐसा कहते हैं। महर्षि व्यास से पूर्व जो ऋषि हुए, महान् गौतम, पापड़ी ऋषि, देवऋषि नारद, सनत्कुमार इत्यादि हुए और सबने बेटा ! ऐसा माना है कि सृष्टि के आरम्भ में आदि आचार्य, चारों ऋषियों द्वारा इन वेदों का अवतरण हुआ। महर्षि पापड़ी मुनि, सनत्कुमार, भृगु आचार्य आदि ने ऐसा माना है, लोमश मुनि आदि ने माना है बेटा ; और व्यास मुनि का भी यही कथन है। तब जो ऐसा है बेटा। वेद नाम है प्रकाश का, वास्तव में हम तुम्हारी वार्ता को स्वीकार कर लेंगे कि ब्रह्मा ने इस त्रिविद्या को जान करके, एक महान् प्रकाश को जाना जो परम प्रकाश परमात्मा है। उसको जानने से तो ऐसा हो सकता है। रही यह वार्ता कि संसार को ज्ञान कराओ, संसार को ज्ञान कराने के लिए, त्रिविद्या देने के लिए, परमात्मा ने यह वेद वाणी, ऋषियों पर

अवतरण की। इन ऋषियों ने हमारे लिए प्रसारित किया। उन्हीं विद्याओं से यह संसार इस प्रकार चला आ रहा है। कोई काल ऐसा न हुआ जिसमें विद्या न हो, सो बेटा ! हर काल में विद्या होती है किसी काल में ऊँचे और दार्शनिक व्यक्ति होते हैं यह अवश्य होता है। किसी में कम किसी काल में अधिक सा, तो होता है। परन्तु ऐसा नहीं जैसा तुम उच्चारण कर रहे हो। अच्छा रही यह वार्ता कि महर्षि व्यास ने वेद के चार काण्ड बनाए, तो बेटा ! इस बात को अवश्य स्वीकार कर लेते यदि बेटा ! हम महर्षि व्यास को न देखते और उनके दर्शन न करते। बेटा ! सत्य को मानने में किसी को आपत्ति नहीं—कोई दार्शनिक हो या योगी हो या कोई प्रमाण हो। महानन्द जी हम तुम्हारे वाक्य अवश्य मान लेते यदि सत्य होते।

पूज्य महानन्द जी — ''तो गुरु जी यदि हम यही मान लेवें कि आपका वाक्य ही सत्य है तो यह कैसे मान लिया जाए। हाँ यह भी सत्य है हमारे वाक्य को इस प्रकार न मानो।''

महानन्द जी यह तो यौगिक वाक्य है और हमारा नहीं कि हम यह कहें कि हमारा वाक्य है यह महर्षि भृगु मुनि का वाक्य है। महर्षि भृगु ही नहीं महर्षि पापड़ी मुनि, अंगिरा आदि आचार्य भी इसका समर्थन कर रहे हैं। आगे तुम्हारी इच्छा तुम वाक्य को मानो या न मानो।

तो मुनिवरो ! अभी-अभी हम महानन्द जी के प्रश्नों के उत्तर दे रहे थे, परन्तु महानन्द जी के जितने प्रश्न हैं यह सब न मानने वाले बन जाते हैं क्योंकि आधुनिक काल की जितनी वार्तायें हैं, देखो यथार्थ भी हैं परन्तु महानन्द जी से हमें प्रतीत होता है यह सब प्रकार की रूप रेखा शान्त किए हुए हैं इसलिए देखो ! हमें महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देना भी अनिवार्य है। ऐसा उच्चारण कर रहे थे। अहा ! व्याख्यान देते-देते हम महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देने लगे। आज का हमारा व्याख्यान क्या प्रारम्भ हो रहा था।

त्रिवेणी और चक्र दर्शन

अहा ! परमात्मा की दी हुई तीन प्रकार की गंगाओं में स्नान कर लेना चाहिए। उन तीन प्रकार की गंगाओं में स्नान कर लेने से बेटा ! हम पवित्र बन जाते हैं और परमात्मा के दर्शन कर लेते हैं। यह तीन प्रकार की कौन सी गंगा हैं? बेटा ! वास्तव में तो देखो हमारे स्वाध्याय करने के लिए, हमारे सत्संग करने के लिए हमारी **यह वेद विद्यायें ही तीन गंगा हैं।** अहा ! जिनको बेटा ! गंगा, यमुना और सरस्वती भी कहा जाता है। सरस्वती नाम विद्या का है, सरस्वती नाम ज्ञान का है और मुनिवरो ! गंगा नाम कर्मकाण्ड का भी है और यमुना नाम बेटा ! उपासना का है। अहा ! यह त्रिविद्या परमात्मा ने दी हैं। ये तीन त्रिविद्या हमारे शरीर में गंगा हैं जिनमें हम स्नान करके महान् पवित्र हो जाते हैं। जैसा हम पूर्व काल में उच्चारण कर चुके हैं कि तीन प्रकार की गंगा हमारे समक्ष हैं। हमारे सर्व शरीर में बह रही हैं, वे तीन प्रकार की कौन सी गंगायें हैं। मुनिवरो ! वह तो योगी जानता है। जब योगी अपनी आत्मा को जानने वाला बन जाता है तो वह जानता है कि आत्मा का उत्थान किस प्रकार होता है और यह तीन प्रकार की कौन सी विद्यायें हैं, कौन सी गंगा है जिसमें यह आत्मा स्नान किया करता है और निर्मल होता रहता है। स्वच्छ होकर परमात्मा के दर्शन कर लेता है।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी आपसे तो पूर्व ही कहा है और अब भी निवेदन है कि इसका समर्थन कर दीजिए?

अरे ! पूर्व कई कालों में कहा है।

पूज्य महानन्द जी — आज पुनः कह दीजिए इसमें आपकी कोई हानि नहीं।

अच्छा तो मुनिवरो ! अभी महानन्द जी ने हमें संकेत किया। महानन्द जी ने हमसे प्रश्न किया कि योगी का विषय कुछ और महान् बनाओ। मुनिवरो ! इसमें तो गंगा का विषय और भी महान् बन जाता है। हमारे यहाँ योगियों ने इन गंगाओं को इस प्रकार जाना है। जब

मानव कर्म काण्ड करता हुआ ध्यान में लीन हो जाता है, मग्न हो करके बेटा ! आगे चलकर यह समाधि में लय होने लगता है तो इसकी यह जानने की इच्छा होती है कि आत्मा और प्राणों की सन्धि कैसे होती है और आत्मा प्राणों को लेकर कैसे चलता है? तो मुनिवरो ! उस जिज्ञासु का हृदय पवित्र, निर्मल होने के नाते यह आत्मा और प्राणों की एकता हो जाती है। यह कैसे हो जाती है? जैसे मुनिवरो देखो ! एक घुड़सवार अपने उद्दण्ड घोड़े पर आसन से सवार है, ऐसे ही मुनिवरो ! यह जो आत्मा है प्राण रूपी घोड़े पर सवार हो जाता है। यह आत्मा जब सवार होकर चलता है, आगे चलता हुआ बेटा ! यह मूलाधार में जाता है। मूलाधार पर बेटा ! वह महान् स्थान आता है जहाँ देखो ! इन तीन गंगा की उत्पत्ति हुई है जिसको गंगा, यमुना और सरस्वती कहते हैं। मुनिवरो ! जब आत्मा आगे चलता है मूलाधार को त्याग कर, मूलाधार में ऐसा योगियों ने कहा है, महर्षियों ने कहा है, लोमश आदि मुनियों ने कहा है, आचार्यों ने कहा है, महर्षि व्यास और पातञ्जली भी कहते हैं और आदि ऋषि पापड़ी मुनि, देवर्षि नारद मुनि, सनत्कुमार आदि ऋषि ने मन को अच्छी प्रकार जाना है। उन्होंने बेटा ! ऐसा निर्णय दिया जिसे मूलाधार कहा जाता है, वहाँ लगभग 6 ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। मानो प्रकाश ही प्रकाश हो जाता है। जहाँ नाना प्रकार की ग्रन्थियाँ लगी होती हैं। वे जब खुल जाती हैं तब मानव को पर्याप्त प्रकाश प्राप्त हो जाता है। आगे चल करके बेटा ! ऐसा कहा जाता है, ऐसा योगियों का अनुभव है कि आगे चलता हुआ आत्मा नाभि चक्र में जाता है। जिसको बेटा। **प्रहन्द चक्र** कहते हैं जिसको **सुअग्नि चक्र** भी कहा जाता है, अहा ! यह आत्मा जब वहाँ पहुँचता है नाभि चक्र में लगभग बारह ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं तो वहाँ ऐसा कहा है ऋषियों ने कि एक नाड़ी से देखो ! कई-कई नाड़ियों का सम्बन्ध है वहाँ ऐसा है मुनिवरो ! हमारे महर्षियों ने वर्णन किया है कि नाभि चक्र एक कूप सदृश माना गया है जहाँ देखो नाना नाड़ियाँ आकर स्नान करती हैं और उसमें से अपना अन्न लेकर वह अपने स्थानों में नियुक्त हो जाती हैं।

जब इन नाड़ियों का मार्ग खुल जाता है तो वह आत्मा निर्मल हो जाता है और इस गंगा सरस्वती में स्नान करती है, मुनिवरो ! जैसा हमारे आचार्यों ने कहा है कि जैसे प्रयागराज है और भी देखो ! मधुबन है, और महानन्द देखो जैसे काशीपुरी अयोध्या है नाना प्रकार के स्थान हैं जो गंगा के तट पर आते हैं। गंगा तट पर कैसे आते हैं? मुनिवरो ! जितने भी महान् चक्र हैं—जैसे देखो ! पूर्व चक्र को हम महान् हरि को मधु द्वार कहा करते हैं जिसको मुनिवरो **कुनेती** कहा करते हैं। कुनेती कहते हुए जहाँ देखो भगवान् के या प्रभु के दर्शन करने का समय आता है। उस मार्ग में चलने का जहाँ प्राण माना है जिसको गंगोत्री कहा जाता है। जब यह आत्मा देखो पूर्व गंगोत्री का स्नान करता है फिर आगे चल करके बेटा ! वह नाभि चक्र में आता है जिसको मुनिवरो ! हरि का द्वार कहते हैं, जहाँ देखो ! मधुर आत्मा, प्राण के साथ बैठा हुआ गंगाओं में रमण करता हुआ, जब आत्मा और आगे चलता है तब देखो मुनिवरो ! आगे हृदय चक्र में आ जाता है। जिसको हम गणों का द्वार कहते हैं, यह उन गणों के समक्ष जाता है। वे गण जो अन्धकार में रहते हैं उनकी अज्ञानता समाप्त हो जाती है। मुनिवरो ! वह देखो ! गंगा में स्नान करके, उन गणों का भी उद्धार हो जाता है, ऐसे ही बेटा ! आत्मा गंगा, यमुना, सरस्वती में स्नान करता हुआ आगे को चलता है। कंठचक्र में जाता है, जिसको बेटा ! काशीपुर कहा जाता है। देखो ! काशी में नाना प्रकार के मधुवन हैं। यहाँ आत्मा को नाना कठिनाईयाँ आती हैं जहाँ नाना विष वस्ती आती हैं, परन्तु देखो जब आत्मा इनके भी समक्ष जाता है, यह प्राण ऐसा प्रबल है कि मुनिवरो ! जो सृष्टि प्रारम्भ करने वाला है जो हमारे शरीर को बनाने वाला है वह आत्मा का साथी बन बैठा है। मुनिवरो ! जब यह प्राण जाता है, सब ग्रन्थियाँ खुलती चली जाती हैं आगे चल करके यह आत्मा बेटा ! उस स्थान पर जाता है जिसको प्रयाग राज कहते हैं। जब यह देखो ! आत्मा प्रयाग में स्नान करके पवित्र और स्वच्छ हो आगे को चलता है तो बेटा ! त्रिवेणी का स्थान आ जाता है। अहा ! वेद क्या कह रहा है। वेद कह रहा है कि त्रिविद्या के जानने से हम त्रिवेणी में पहुँच जाते

हैं जहाँ, बेटा ! गंगा, यमुना और सरस्वती की तीनों धाराएँ एक में मिल जाती हैं। आगे चल करके नील धारा बन जाती है। अहा ! बेटा ! उसको त्रिवेणी कहते हैं। जहाँ देखो मुनिवरो ! देवताओं और दैत्यों का संग्राम होता रहता है, जब संघर्ष होता रहता है यह प्राणों सहित त्रिवेणी में गोते लगाता है, उस त्रिवेणी में स्नान करता है।

उस त्रिवेणी में स्नान करते ही, यह सब दैत्य पृथक हो जाते हैं, देवता अलग हो जाते हैं, वहाँ त्रिवेणी त्रिविद्या को पाकर के और त्रिवेणी में स्नान करके यह आत्मा स्वच्छ और पवित्र बन जाती है। आगे चलकर हमारे योगियों ने कहा है, महर्षि सनत्कुमार आदि ने कहा है और आदि ऋषियों का ऐसा ही कथन है। पूर्व स्थल में हम बहुत से ऋषियों के वचन वर्णन कर चुके हैं। आगे कल के व्याख्यान में कह देंगे। हम कह रहे थे कि त्रिवेणी में स्नान करते हुए यह आत्मा त्रिवेणी से ऊपरी स्थान में स्नान करने चला जाता है। मुनिवरो ! अगला स्थान जिसको बेटा ! ब्रह्मरंध्र कहते हैं—जब यह आत्मा उस ब्रह्मरंध्र में जाता है जैसा हमने पूर्व कहा था, कि योगी को हर प्रकार का प्रकाश हो जाता है, जैसे मुनिवरो ! हम सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर और स्थूल शरीर और पार्थिव शरीर को त्याग देते हैं यह सूक्ष्म शरीर वाले की दृष्टि बहुत अधिक हो जाती है। दृष्टि सौगुनी हो जाती है। योगियों ने तो ऐसा कहा है जिस समय आत्मा को इतनी सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त हो जाती है उस सूक्ष्म स्थिति को जानकर और महान् शंकर के यहाँ ब्रह्मरन्ध्र में जाते ही आत्मा को सौ सूर्यों वाला प्रकाश प्राप्त हो जाता है। आगे चलकर यह आत्मा शंख चक्र में पहुँच जाता है। रीढ़ के भाग में जाकर के उसकी सब ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। उस समय योगी को प्रज्ञा, बुद्धि प्राप्त हो जाती है। वह परमात्मा से मिलाप कराने वाली होती है। अहा ! उस समय मुनिवरो ! जो परमात्मा हम सब का स्वामी है, जिसके गर्भ में यह संसार बस रहा है, उस परमात्मा की गोद में चले जाते हैं, परमानन्द को प्राप्त करते हैं। परमानन्द में रमण करने लगते हैं तो **यह त्रिविद्या ही तीन गंगा हैं** इन गंगाओं में स्नान करने से हृदय पवित्र हो जाता है उसमें महान् बन करके बेटा ! इस संसार सागर से पार हो जाते हैं।

मुनिवरो ! यह है हमारा आज का व्याख्यान। परन्तु मानव की यह स्थिति उसी काल में होती है जब मानव परमात्मा के अनुकूल कार्य करता है। जो मानव परमात्मा के अनुकूल कार्य नहीं करता वह इन त्रिविद्याओं या गंगाओं को प्राप्त नहीं कर सकता। मुनिवरो ! यह आज का आदेश समाप्त हुआ। अब हमारी इच्छा है कि कल जो हमने दार्शनिक विषय को त्यागा था कल हमारा दार्शनिक विषय ही होगा क्योंकि आज हम व्याख्यान देते हुए कहाँ से कहाँ पहुँच गए। क्या करें दार्शनिक विषय था, समय की गति से वेद का पाठ इस प्रकार का आया कि उसी के अनुकूल व्याख्यान बन गया। दार्शनिक विषय को द्वितीय स्थान पर प्रकट करेंगे। आज तो हमारा वाक्य समाप्त हो गया। अब हमारा वेद का पाठ होगा उसके पश्चात् वार्ता समाप्त होगी। आज हम लोक लोकान्तरों के वेद पाठ को तो कर रहे थे, परन्तु क्या करें महानन्द के ऐसे प्रश्न थे।

अच्छा ! कल हमारा दार्शनिक विषय पर व्याख्यान होगा, जिसमें देखो ! भू लोक, भूवः लोक, स्वः लोक, महः लोक, जनः लोक, तपः लोक और सत्य लोकों की गणना होगी, कल वेद के अनुकूल व्याख्यान देंगे। हमारा व्याख्यान समाप्त हुआ अब कल हम मिलेंगे, फिर बेटा ! तुम्हारी अवश्य सेवा करेंगे हास्य.....(महानन्द) तो मुनिवरो ! अब हमारा वेद का पाठ होगा।

वेद पाठ.....।

धन्यवाद !

दिनाँक : 7 अप्रैल, 1962

स्थान : विनय नगर आर्य समाज, नई दिल्ली के तत्त्वावधान में

॥ ओ३म् ॥

श्रद्धा-सुमन

श्रीमती कान्ती रानी जयनारायण मंगल

आदरणीय श्री जयनारायण चिरन्जीवलाल मंगल जी ने वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) नई दिल्ली को 5100 रु. का चैक इस आग्रह के साथ भेजा है कि यह धनराशि लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय में 2 मार्च 2014 से 9 मार्च 2014 तक होने वाले चतुर्वेद ब्रह्म पारायण याग में उनकी ओर से आहुति प्रदान करने के लिए स्वीकार की जावे जिससे कि उनकी दिवंगत पत्नि श्रीमति कान्ती रानी जयनारायण मंगल की आत्मा को शान्ति निरन्तर प्रशस्त होती रहे! श्री जयनारायण जी इस आहुति को स्वयं लाक्षागृह आकर समर्पित करने की प्रबल इच्छा रखते हुए भी अपनी वृद्ध अवस्था में चलने फिरने में असमर्थता के कारण असमर्थ हैं।

श्री जयनारायण जी मूल रूप से सोना, गुड़गांवा, हरियाणा के निवासी हैं और जीवन वृत्ति के लिये मुम्बई चले गये। पूज्यपाद गुरुदेव के दर्शन करने के पश्चात् उनके प्रवचनों के अध्ययन से अपने को निरन्तर जाग्रत करते रहे जिससे कि श्रद्धा व ज्ञान निरन्तर बढ़ता रहा और समय-समय पर पत्र व्यवहार करके अपने को पूज्यपाद गुरुदेव से सम्पर्क में भी मार्ग दर्शन प्राप्त करते रहे। सेवानिवृत्त होने के पश्चात मुम्बई में ही परमपिता परमात्मा की उपासना में वैदिक परम्परा से संलग्न रहते हुए अपने परिवार के साथ आनन्द से अपने जीवन में आत्मोन्नति की तरफ निरन्तर अग्रसित हो रहे हैं। उनकी देवी का जन्म दिपावली लक्ष्मी पूजन दिनाँक 8-11-1942 को हुआ और दिनांक 1-8-2013 को इस नश्वर शरीर को त्यागकर अमरावती को चली गईं।

पूज्यपाद गुरुदेव के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए जो आहुति मंगल परिवार ने अर्पित की है समिति उसके लिए आभार प्रगट करती हैं और समस्त परिवार की सुख, समृद्धि, शान्ति और आत्मोन्नति के लिए परमपिता परमात्मा से विनय करती हैं।

श्री गान्धी धाम समिति (पञ्जी.)
वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	50.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	40.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	25.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

यौगिक प्रवचन के स्वामित्व व अन्य विवरण का ब्यौरा फार्म नं. 4 (नियम नं. 8)

1.	प्रकाशन स्थान	: दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	: मासिक
3.	मुद्रक	: डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	: भारतीय
	मुद्रक का पता	: ए-59, पँचशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017
4.	प्रकाशक	: डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	: भारतीय
	प्रकाशक का पता	: ए-59, पँचशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017
5.	सम्पादक का नाम	: डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश
	नागरिकता	: भारतीय
	सम्पादक का पता	: ए-59, पँचशील एन्कलेव, नई दिल्ली-110017

6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों। : वैदिक अनुसंधान समिति (पंजी.)

मैं डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश

प्रकाशक के हस्ताक्षर

वैदिक अनुसंधान समिति (पंजी.)

सी-38, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''संहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :-

पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFS Code - PUNB-0014900

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) नई दिल्ली

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

मैं आज यह उच्चारण करने आया हूँ कि ब्राह्मणों में एक महानता होनी चाहिए, विचित्रता होनी चाहिए। उनका अन्तरात्मा इतना याज्ञिक होना चाहिए कि जिससे राष्ट्र हो, कोई भी हो, वह बाध्य हो जाए, विचारों में उसके बाध्यपन आ जाए और वह उस वाक्य को स्वतः ही प्रतिभा में लाने का प्रयास करे। हम यह विचार-विनिमय करते हैं कि वास्तव में हमारा मानवीय जीवन कितना सुन्दर और पवित्र है। आज मैं इन वाक्यों को अधिक उच्चारण नहीं करना चाहता। वाक्यों के उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हम सदैव अपनी मानवीयता को उत्तम बनाएं, याज्ञिक बनाएं, क्योंकि इसी में ही तो सुन्दरत्व होता है। राष्ट्रीय विचार भी मानव का एक यज्ञ है। कैसा सुन्दर यज्ञ है? एक राष्ट्रीय नेतृत्व कर रहा अपनी निष्ठा से, उसमें कितनी निष्ठा है और निष्ठावान बन करके वह चलता है तो उसके द्वारा नाना प्रकार की आपत्ति आएंगी तो उन्हें वह पार कर जाता है। जैसे एक याज्ञिक पुरुष होता है, अन्तरात्मा में यज्ञ करने वाला जो पुरुष होता है वह चलता चला जाता है, वायु की नाना प्रकार की आपत्ति उस मानव के समीप आती हैं परन्तु वह सबको उलांघ जाता है। आज हमें उन सभी पर विचार-विनिमय करना है।

–पूज्यपाद गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 498
मार्च 2014

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-03-2014
Published on 5th day of the same month